E-ISSN: 2583-9667
Indexed Journal
Peer Reviewed Journal
Impact Factor: 6.49
https://multiresearchjournal.theviews.in

INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCE RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY

Volume 3; Issue 4; 2025; Page No. 16-21

Special Issue of International Seminar (10 December 2025)
On the Topic
Human Rights and Education
By
Faculty of Education, Faculty of Arts and Social Sciences, IASE (DU), Sardarshahar, Churu, Rajasthan - 331403

Historical Evolution of Human Rights: From Ancient Civilizations to Modern Democracies

Dr. Ravindra Kumar

Assistant Professor, IASE (Deemed to be University), Sardarshahar, Rajasthan, India

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.18051983

Corresponding Author: Dr. Ravindra Kumar

Abstract
मानव सभ्यता के विकास की यात्रा सिर्फ भौतिक प्रगति की नहीं, बल्कि मानव अधिकारों, स्वतंत्रता और गरिमा की रक्षा के लिए किए गए संघर्षों का भी इतिहास है। प्रारंभ में अधिकार केवल शासकों की इच्छा पर आधारित थे, लेकिन धीरे–धीरे समाज में जागरूकता आई और यह धारणा विकसित हुई कि प्रत्येक मनुष्य को जन्म से समान अधिकार मिलते हैं। आधुनिक युग में मानवाधिकार अंतर्राष्ट्रीय कानून, संवैधानिक व्यवस्थाओं और लोकतांत्रिक शासन प्रणालियों का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुके हैं। यह शोध पत्र मानवाधिकारों के ऐतिहासिक विकास को समझने का प्रयास करता है, और यह बताता है कि कैसे शोषण और अत्याचार से संघर्ष करते हुए मानवाधिकारों की नींव रखी गई। विशेष रूप से भारतीय सभ्यता, प्राचीन सभ्यताओं और आधुनिक क्रांतियों में मानवाधिकारों के विकास की यात्रा को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। इस शोध का उद्देश्य मानवाधिकारों के विकास की प्रक्रिया और उनके आधुनिक रूप को समझना है।

Keywords: मानवाधिकार, मानव गरिमा, स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय, ऐतिहासिक विकास, भारतीय सभ्यता, आधुनिक क्रांतियाँ, संविधान, लोकतंत्र

1. प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास की यात्रा केवल भौतिक प्रगति की कहानी नहीं है, बल्कि यह मानव की गरिमा, स्वतंत्रता और अधिकारों के लिए किए गए निरंतर संघर्ष का भी इतिहास है। जैसे–जैसे समाज आगे बढ़ता गया, वैसे–वैसे मानव के अधिकारों को लेकर उसकी चेतना भी विकसित होती गई। प्रारंभिक काल में अधिकार किसी लिखित नियम या सार्वभौमिक सिद्धांत पर आधारित न होकर पूर्णतः शासकों की इच्छा और शक्ति पर निर्भर करते थे। राजा या शासक जो चाहता, वही कानून माना जाता था और सामान्य जनता को अधिकार नहीं, बल्कि केवल कर्त्तव्य निभाने वाला वर्ग समझा जाता था। धीरे–धीरे सामाजिक अनुभवों, विद्रोहों, धार्मिक और दार्शनिक विचारों तथा राजनीतिक आंदोलनों के प्रभाव से यह धारणा विकसित हुई कि प्रत्येक मनुष्य जन्म से स्वतंत्र है और उसे समान गरिमा तथा समान अधिकार प्राप्त होने चाहिए। यही विचार आगे चलकर मानवाधिकारों की अवधारणा का आधार बना। आधुनिक युग में मानवाधिकार केवल नैतिक सिद्धांत नहीं रह गए हैं, बल्कि वे अंतर्राष्ट्रीय कानून, संवैधानिक व्यवस्थाओं और लोकतांत्रिक शासन प्रणालियों की मूल आत्मा बन चुके हैं। आज किसी भी लोकतांत्रिक राष्ट्र की पहचान इस बात से होती है कि वह अपने नागरिकों के अधिकारों की कितनी प्रभावी सुरक्षा करता है। मानवाधिकारों का ऐतिहासिक विकास यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मानव समाज ने एक लंबी और कठिन यात्रा तय की है–जहाँ उसने शोषण, अत्याचार और निरंकुशता से संघर्ष करते हुए स्वतंत्रता, समानता और न्याय के मूल्यों को स्थापित किया है। यह विकास केवल कानूनी सुधारों का परिणाम नहीं है, बल्कि यह मानव की सामाजिक चेतना, नैतिक मूल्यों और लोकतांत्रिक सोच के क्रमिक उन्नयन की भी अभिव्यक्ति है। इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के आलोक में मानवाधिकारों के विकास को समझना इस शोध–पत्र का मुख्य उद्देश्य है।

2. प्राचीन सभ्यताओं में मानवाधिकारों की अवधारणा

मानवाधिकारों की आधुनिक परिभाषा भले ही हाल की प्रतीत होती हो, किंतु उसके बीज प्राचीन सभ्यताओं के सामाजिक, धार्मिक और नैतिक विचारों में ही निहित थे। उस काल में अधिकारों की अवधारणा आज के समान सार्वभौमिक और समानतापूर्ण नहीं थी, बल्कि वह कर्त्तव्यों, सामाजिक व्यवस्था और राज्य की शक्ति से जुड़ी हुई थी। फिर भी, न्याय, सत्य, करुणा, समानता और मानव कल्याण जैसे मूलभूत मूल्य विभिन्न सभ्यताओं में किसी न किसी रूप में विद्यमान थे, जो आगे चलकर मानवाधिकारों की नींव बने।

(क) मेसोपोटामिया सभ्यता

मेसोपोटामिया सभ्यता को विधि–व्यवस्था के विकास का प्रारंभिक केंद्र माना जाता है। लगभग 1750 ईसा पूर्व निर्मित हम्मूराबी संहिता विश्व की प्रथम सुव्यवस्थित लिखित विधि–संहिता मानी जाती है। इसमें समाज के विभिन्न वर्गों के लिए न्याय, अपराध एवं दंड, संपत्ति संबंधी नियम, व्यापार, परिवार और सामाजिक कर्त्तव्यों से जुड़े नियमों का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। यद्यपि यह संहिता समानता के सिद्धांत पर आधारित नहीं थी और इसमें वर्ग–भेद स्पष्ट दिखाई देता है, फिर भी यह इस बात का महत्त्वपूर्ण प्रमाण है कि मनुष्य ने पहली बार यह स्वीकार किया कि समाज का संचालन निरंकुश इच्छा से नहीं, बल्कि विधि और नियमों के आधार पर होना चाहिए। इस दृष्टि से यह 'विधि के शासन' (Rule of Law) की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम था, जिसने आगे चलकर मानवाधिकारों की अवधारणा के विकास का मार्ग प्रशस्त किया।

(ख) मिस्र सभ्यता

प्राचीन मिस्र में राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता था और शासन पूर्णतः राजसत्ता–केंद्रित था। इसके बावजूद मिस्र की सभ्यता में न्याय, सत्य और नैतिकता को अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। 'मा'त' (Maat) का सिद्धांत सत्य, संतुलन, न्याय और नैतिक व्यवस्था का प्रतीक था। मिस्र समाज में यह विश्वास था कि शासक का कर्त्तव्य केवल शासन करना नहीं, बल्कि प्रजा के साथ न्याय करना भी है। गरीबों, कमजोर वर्गों और विधवाओं के प्रति सहानुभूति, उनके अधिकारों की रक्षा तथा अन्याय से संरक्षण जैसे विचार वहां की सामाजिक और धार्मिक मान्यताओं में दिखाई देते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि अधिकार आधुनिक अर्थों में परिभाषित नहीं थे, फिर भी मानव की गरिमा और न्याय की भावना मिस्र सभ्यता का महत्त्वपूर्ण अंग थी।

(ग) भारतीय सभ्यता

भारतीय सभ्यता में मानवाधिकारों की अवधारणा का विकास मुख्यतः धर्म, कर्त्तव्य, करुणा, अहिंसा और नैतिकता पर आधारित रहा है। यहां अधिकार और कर्त्तव्य एक–दूसरे से अलग नहीं, बल्कि परस्पर जुड़े हुए माने गए हैं। मनुस्मृति जैसे ग्रंथों में सामाजिक कर्त्तव्यों, आचरण और कुछ अधिकारों का उल्लेख मिलता है, यद्यपि वस्तुतः यह व्यवस्था भी पूरी तरह समानतावादी नहीं थी। बौद्ध धर्म ने मानवाधिकारों की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण वैचारिक परिवर्तन प्रस्तुत किया। भगवान बुद्ध ने जाति, वर्ग और ऊँच–नीच के भेदभाव को अस्वीकार करते हुए सभी प्राणियों के प्रति करुणा, समानता और अहिंसा का संदेश दिया। उन्होंने दुःख, अन्याय और शोषण से मुक्ति को मानव का मूल लक्ष्य माना। सम्राट अशोक के शिलालेख भारतीय इतिहास में मानवाधिकार चेतना के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। अशोक ने धार्मिक सहिष्णुता, जीवों के प्रति दया, जनता के कल्याण, न्यायपूर्ण शासन और नैतिक मूल्यों के पालन पर विशेष बल दिया। उनके शिलालेख यह प्रमाणित करते हैं कि राज्य का उद्देश्य केवल सत्ता नहीं, बल्कि जनकल्याण भी होना चाहिए। इस प्रकार भारतीय सभ्यता में मानवाधिकारों की भावना आध्यात्मिक और नैतिक आधार पर विकसित हुई।

(घ) चीन सभ्यता

चीन की प्राचीन सभ्यता में मानवाधिकारों की अवधारणा व्यक्तिगत अधिकारों की अपेक्षा सामाजिक कर्त्तव्यों पर अधिक आधारित थी। कन्फ्यूशियस के विचारों ने चीनी समाज की नैतिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया। उन्होंने सामाजिक अनुशासन, नैतिकता, पारिवारिक मूल्यों, आपसी सम्मान और न्याय पर विशेष बल दिया। कन्फ्यूशियस के अनुसार एक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह समाज और राज्य के प्रति अपने दायित्वों का ईमानदारी से पालन करे। यहां अधिकारों का विचार सीमित था, किंतु न्यायपूर्ण शासन, नैतिक प्रशासन और जनकल्याण की अवधारणा ने मानव गरिमा की रक्षा को एक नैतिक जिम्मेदारी के रूप में प्रस्तुत किया।

(ङ) यूनानी सभ्यता

यूनानी सभ्यता को मानवाधिकारों के बौद्धिक विकास का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण केंद्र माना जाता है। यहां पहली बार लोकतंत्र की अवधारणा ने मूर्त रूप ग्रहण किया, विशेषकर एथेंस में। नागरिकों को शासन में भागीदारी का अधिकार मिला, जो उस समय एक क्रांतिकारी विचार था। प्लेटो और अरस्तू जैसे महान दार्शनिकों ने न्याय, स्वतंत्रता, समानता और आदर्श राज्य की अवधारणा पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत किया। हालांकि, यूनानी लोकतंत्र पूर्ण रूप से समावेशी नहीं था। दासों, महिलाओं और विदेशियों को राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं थे। इसके बावजूद यह तथ्य अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि यूनान ने यह स्थापित किया कि सत्ता केवल किसी एक व्यक्ति के हाथ में न होकर नागरिकों की भागीदारी पर आधारित हो सकती है। आगे चलकर आधुनिक लोकतंत्र और मानवाधिकारों की अवधारणा के लिए यह विचार एक मजबूत आधार बना।

3. मध्यकालीन दौर में मानवाधिकार

मध्यकाल का कालखंड सामान्यतः मानवाधिकारों के दृष्टिकोण से एक कठिन और संघर्षपूर्ण युग माना जाता है। इस समय विश्व के अधिकांश भागों में राजशाही, सामंतवाद और धार्मिक सत्ता का प्रभुत्व था। सत्ता का केंद्र राजा और सामंतों के हाथों में सीमित था, जबकि सामान्य जनता शोषण, कर, बेगार और असुरक्षा के जीवन से जूझ रही थी। मानव के व्यक्तिगत अधिकारों की अवधारणा इस समय अत्यंत कमजोर थी, क्योंकि समाज की संरचना असमानता और वर्ग–भेद पर आधारित थी। फिर भी, इसी अंधकारमय दौर में कुछ ऐसे ऐतिहासिक प्रयास भी हुए, जिन्होंने भविष्य में मानवाधिकारों के विकास की मजबूत नींव रखी।

(क) मैग्ना कार्टा (1215) – इंग्लैंड

मैग्ना कार्टा को मानवाधिकारों के इतिहास में एक ऐतिहासिक मील का पत्थर माना जाता है। यह दस्तावेज 1215 ईस्वी में इंग्लैंड के राजा जॉन और उनके सामंतों के बीच हुए संघर्ष के परिणामस्वरूप अस्तित्त्व में आया। इस समझौते के माध्यम से पहली बार राजा की निरंकुश शक्तियों पर औपचारिक रूप से नियंत्रण लगाया गया। इसमें यह स्पष्ट किया गया कि राजा भी कानून के अधीन होगा और वह मनमाने ढंग से कर नहीं लगाएगा, न ही किसी व्यक्ति को बिना न्यायिक प्रक्रिया के जेल में डालेगा। मैग्ना कार्टा ने यह सिद्धांत स्थापित किया कि प्रत्येक व्यक्ति को न्याय पाने का अधिकार है और उसकी स्वतंत्रता को केवल उचित कानूनी प्रक्रिया के अंतर्गत ही सीमित किया जा

सकता है। यद्यपि यह दस्तावेज तत्कालीन समय में मुख्यतः सामंतों के हितों की रक्षा हेतु बनाया गया था, फिर भी इसके अंतर्निहित सिद्धांतों ने भविष्य के लोकतांत्रिक ढाँचों और मानवाधिकार घोषणाओं को गहरे रूप से प्रभावित किया। आधुनिक 'विधि के शासन' और 'न्यायिक स्वतंत्रता' की अवधारणाएं कहीं न कहीं इसी दस्तावेज से प्रेरित मानी जाती हैं।

(ख) इस्लामी दुनिया में मानवाधिकार

मध्यकालीन इस्लामी सभ्यता में मानवाधिकारों की अवधारणा का विकास धार्मिक, सामाजिक और नैतिक मूल्यों के आधार पर हुआ। इस्लाम ने मानव मात्र की समानता पर विशेष बल दिया और यह घोषित किया कि सभी मनुष्य ईश्वर की दृष्टि में समान हैं। जाति, नस्ल और वर्ग के आधार पर भेदभाव को इस्लाम ने स्वीकार नहीं किया। महिलाओं को उस समय के अन्य समाजों की तुलना में अधिक अधिकार प्रदान किए गए—जैसे संपत्ति में अधिकार, विवाह में सहमति का अधिकार और सामाजिक सुरक्षा। इस्लामी समाज में सामाजिक न्याय, दया, सहानुभूति और परोपकार को अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना गया। जकात और दान की व्यवस्था के माध्यम से गरीबों और जरूरतमंदों की सहायता को धार्मिक कर्त्तव्य का रूप दिया गया। दासप्रथा को एकाएक समाप्त तो नहीं किया गया, किंतु उसके मानवीकरण और क्रमिक उन्मूलन की दिशा में कई नैतिक और कानूनी नियंत्रण लगाए गए। इस प्रकार इस्लामी दुनिया ने मध्यकाल में मानव गरिमा, समानता और सामाजिक न्याय की भावना को एक सशक्त धार्मिक आधार प्रदान किया, जो मानवाधिकार चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान मानी जाती है।

4. पुनर्जागरण और मानवतावाद का प्रभाव

मध्यकालीन जड़ता और धार्मिक प्रभुत्व के बाद यूरोप में 14वीं शताब्दी से 17वीं शताब्दी के बीच जिस बौद्धिक और सांस्कृतिक जागरण का उदय हुआ, उसे पुनर्जागरण (Renaissance) कहा जाता है। यह काल मानव इतिहास में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ, क्योंकि इसने मानव को पुनः चिंतन का केंद्र बनाया। इस काल में मनुष्य को केवल ईश्वर की अधीन प्रजा न मानकर एक स्वतंत्र, विचारशील और सर्जनशील प्राणी के रूप में देखा जाने लगा। यहीं से मानवतावाद (Humanism) की अवधारणा का विकास हुआ, जिसने मानवाधिकारों के आधुनिक स्वरूप का वैचारिक आधार तैयार किया। पुनर्जागरण काल में शिक्षा, विज्ञान, कला, साहित्य और दर्शन के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई। लोगों ने अंधविश्वास, रूढ़िवादिता और धार्मिक कट्टरता पर प्रश्न उठाने शुरू किए। यह पहली बार हुआ जब व्यक्ति की स्वतंत्र चेतना, तर्कशक्ति और आत्मसम्मान को महत्व दिया गया। मानव को अब केवल धर्म के दायरे में नहीं, बल्कि उसके प्राकृतिक अधिकारों के साथ देखने की प्रवृत्ति विकसित हुई। इस बौद्धिक क्रांति ने यह भावना पैदा की कि प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन, विचार और कार्यों के प्रति स्वयं उत्तरदायी है और उसे स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए। इस काल के महान दार्शनिकों ने मानवाधिकारों की स्वस्थ वैचारिक नींव रखी। जॉन लॉक ने प्राकृतिक अधिकारों का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को जन्म से जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति का अधिकार प्राप्त है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि राज्य का उद्देश्य इन अधिकारों की रक्षा करना है, न कि उनका हनन करना। यदि कोई सरकार नागरिकों के अधिकारों का उल्लंघन करती है, तो जनता को उसे बदलने का नैतिक अधिकार है। यह विचार आगे चलकर लोकतांत्रिक शासन का आधार बना। थॉमस हॉब्स ने प्राकृतिक अवस्था और सामाजिक अनुबंध की अवधारणा प्रस्तुत की। उन्होंने माना कि राज्य की स्थापना लोगों की सुरक्षा और शांति के लिए हुई है। जीन जैक्स रूसो ने जनता की संप्रभुता (Popular Sovereignty) और समानता पर जोर दिया। उनका मानना था कि वास्तविक सत्ता जनता में निहित होती है और सभी नागरिक कानून की दृष्टि में समान होने चाहिए। पुनर्जागरण और मानवतावाद के प्रभाव से यह धारणा मजबूत हुई कि मनुष्य केवल शासक का अधीन प्राणी नहीं है, बल्कि वह एक स्वतंत्र नागरिक है, जिसके अपने कुछ जन्मजात अधिकार हैं। यहीं से व्यक्तिगत स्वतंत्रता, विचार की आजादी, शिक्षा का अधिकार और आत्मसम्मान जैसी अवधारणाओं ने व्यापक रूप ग्रहण किया। इस प्रकार पुनर्जागरण काल ने मानवाधिकारों को धार्मिक सीमाओं से निकालकर मानव–केंद्रित दृष्टिकोण में स्थापित किया। यही वैचारिक परिवर्तन आगे चलकर अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रांतियों का प्रेरणास्त्रोत बना और आधुनिक लोकतंत्र के उदय का मार्ग प्रशस्त किया।

5. आधुनिक क्रांतियों में मानवाधिकारों का विकास

18वीं शताब्दी का काल मानवाधिकारों के इतिहास में एक युगांतकारी परिवर्तन लेकर आया। इस दौर को आधुनिक क्रांतियों का युग कहा जाता है, क्योंकि इसी समय जनता ने पहली बार संगठित रूप से निरंकुश शासन, शोषण और असमानता के विरुद्ध संघर्ष किया। इन क्रांतियों का उद्देश्य केवल राजनीतिक सत्ता परिवर्तन नहीं था, बल्कि मानव की स्वतंत्रता, समानता और गरिमा की स्थापना करना भी था। विशेष रूप से अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम (1776) और फ्रांसीसी क्रांति (1789) ने मानवाधिकारों को वैचारिक स्तर से उठाकर संवैधानिक और कानूनी स्वरूप प्रदान किया।

(क) अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम (1776) और मानवाधिकार

अमेरिका 18वीं शताब्दी में ब्रिटिश उपनिवेश था, जहाँ जनता पर भारी कर लगाए जाते थे और उन्हें राजनीतिक प्रतिनिधित्व से वंचित रखा गया था। इसी अन्याय के विरुद्ध 1776 में अमेरिकी जनता ने स्वतंत्रता संग्राम छेड़ा। इस संघर्ष का वैचारिक आधार अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा–पत्र (Declaration of Independence) बना, जिसे मानवाधिकारों के इतिहास का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण दस्तावेज माना जाता है।

इस घोषणा–पत्र में यह स्पष्ट रूप से कहा गया कि
"सभी मनुष्य समान पैदा होते हैं और उन्हें जीवन, स्वतंत्रता तथा सुख की प्राप्ति का प्राकृतिक अधिकार प्राप्त है।"

यह पहली बार था जब किसी राष्ट्र ने यह स्वीकार किया कि अधिकार ईश्वर, राजा या राज्य से नहीं, बल्कि मनुष्य के जन्म के साथ प्राप्त होते हैं। इस आंदोलन के परिणामस्वरूप अमेरिका एक स्वतंत्र लोकतांत्रिक राष्ट्र बना और वहाँ एक ऐसा संविधान विकसित हुआ, जिसमें नागरिकों के मौलिक अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित की गई। अमेरिकी क्रांति ने यह सिद्धांत स्थापित किया कि यदि सरकार जनता के अधिकारों की रक्षा करने में असफल रहती है, तो जनता को उसे बदलने का अधिकार है। यह विचार आगे चलकर आधुनिक लोकतंत्र और मानवाधिकारों की रीढ़ बना।

(ख) फ्रांसीसी क्रांति (1789) और मानवाधिकारों की घोषणा

फ्रांस में 1789 में जो जनक्रांति हुई, उसने केवल फ्रांसीसी शासन व्यवस्था को ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया की राजनीतिक सोच को बदल दिया। उस समय फ्रांस में समाज तीन वर्गों में बंटा हुआ था—पादरी वर्ग, सामंत वर्ग और सामान्य जनता। सभी विशेषाधिकार पहले दो वर्गों के पास थे, जबकि आम जनता गरीबी, कर और शोषण से त्रस्त थी। इसी सामाजिक अन्याय के विरुद्ध जनता ने विद्रोह किया, जो आगे चलकर फ्रांसीसी क्रांति

के रूप में प्रसिद्ध हुआ। इस क्रांति का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम था "मानव और नागरिक अधिकारों की घोषणा" (Declaration of the Rights of Man and of the Citizen)। इस घोषणा–पत्र में यह स्पष्ट किया गया कि

- सभी नागरिक कानून की दृष्टि में समान हैं,
- प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्रता, संपत्ति, सुरक्षा और उत्पीड़न के विरुद्ध प्रतिरोध का अधिकार है,
- विचार, अभिव्यक्ति और धर्म की स्वतंत्रता प्रत्येक नागरिक का मौलिक अधिकार है।

फ्रांसीसी क्रांति का मुख्य नारा था–
"स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व" (Liberty, Equality and Fraternity)
यह नारा मानवाधिकारों की आत्मा बन गया और आगे चलकर विश्व के अनेक लोकतांत्रिक आंदोलनों का प्रेरणास्त्रोत बना।

(ग) आधुनिक मानवाधिकार आंदोलन पर क्रांतियों का प्रभाव

अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रांतियों ने मानवाधिकारों को पहली बार राजनीतिक और संवैधानिक मान्यता प्रदान की। अब अधिकार केवल दार्शनिक विचार न रहकर कानूनी अधिकार बन गए। इन क्रांतियों से यह सिद्ध हुआ कि

- राज्य जनता के लिए होता है,
- सत्ता का वास्तविक स्रोत जनता है,
- और सरकार का सर्वोच्च कर्त्तव्य नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना है।

इन आंदोलनों का प्रभाव यूरोप, एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका तक फैल गया। बाद के स्वतंत्रता आंदोलनों, लोकतांत्रिक क्रांतियों और संविधान निर्माण प्रक्रियाओं में इन विचारों ने प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

6. 20वीं सदी और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार आंदोलन

20वीं सदी मानवाधिकारों के इतिहास में एक निर्णायक और परिवर्तनकारी युग के रूप में जानी जाती है। इस शताब्दी में जहाँ एक ओर विज्ञान, तकनीक और औद्योगीकरण ने अभूतपूर्व प्रगति की, वहीं दूसरी ओर दो विनाशकारी विश्व युद्धों ने मानवता को गहरे संकट में डाल दिया। युद्धों के दौरान हुए व्यापक नरसंहार, नस्लीय अत्याचार, स्त्रियों और बच्चों पर हिंसा, यहूदियों का यहूदी संहार (Holocaust) तथा मानव गरिमा का घोर अपमान मानव इतिहास के सबसे दुखद अध्याय बने। इन घटनाओं ने विश्व समुदाय को यह गहराई से सोचने के लिए विवश किया कि यदि मानवाधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर रक्षा नहीं की गई, तो सभ्यता का भविष्य अत्यंत संकटपूर्ण हो जाएगा।

(क) प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध का प्रभाव

प्रथम विश्व युद्ध (1914–1918) ने दुनिया को यह अनुभव कराया कि युद्ध केवल देशों को ही नहीं, बल्कि मानव मूल्यों और नैतिकता को भी नष्ट कर देता है। युद्ध समाप्त होने के बाद शांति और मानव सुरक्षा की स्थापना के प्रयास तो किए गए, किंतु वे पर्याप्त प्रभावी सिद्ध नहीं हुए। इसके परिणामस्वरूप द्वितीय विश्व युद्ध (1939–1945) और भी भयानक रूप में सामने आया। इस युद्ध में करोड़ों निर्दोष लोगों की मृत्यु हुई, लाखों लोग शरणार्थी बने और मानवता के विरुद्ध अमानवीय अपराध किए गए। इन भयावह अनुभवों ने विश्व को यह स्पष्ट संदेश दिया कि केवल राष्ट्रीय कानून मानवाधिकारों की रक्षा के लिए पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि एक ऐसी अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की आवश्यकता है, जो समस्त मानव जाति के अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित कर सके।

(ख) संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना (1945)

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ (United Nations Organization – UNO) की स्थापना की गई। इसका मुख्य उद्देश्य था–

- अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की स्थापना,
- देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा देना,
- और मानवाधिकारों की रक्षा करना।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने पहली बार मानवाधिकारों को एक वैश्विक विषय के रूप में स्वीकार किया। अब मानवाधिकार किसी एक देश की आंतरिक समस्या न रहकर पूरे विश्व की सामूहिक जिम्मेदारी बन गए। संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में यह स्पष्ट किया गया कि सभी सदस्य राष्ट्र मानव गरिमा, समानता और मौलिक स्वतंत्रताओं का सम्मान करेंगे।

(ग) सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा–पत्र, 1948

संयुक्त राष्ट्र संघ की सबसे ऐतिहासिक उपलब्धियों में से एक सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा–पत्र (Universal Declaration of Human Rights - 1948) का निर्माण है। यह घोषणा–पत्र 10 दिसंबर 1948 को स्वीकार किया गया, जिसे आज मानवाधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस दस्तावेज ने पहली बार पूरी मानव जाति के लिए समान अधिकारों की सूची प्रस्तुत की। इस घोषणा–पत्र में कुल 30 अनुच्छेद हैं, जिनमें प्रमुख रूप से निम्नलिखित अधिकारों को शामिल किया गया है–

- जीवन, स्वतंत्रता और सुरक्षा का अधिकार
- समानता और भेदभाव से मुक्ति का अधिकार
- विचार, अभिव्यक्ति और धर्म की स्वतंत्रता
- शिक्षा का अधिकार
- रोजगार और सामाजिक सुरक्षा का अधिकार
- यातना और अमानवीय व्यवहार के विरुद्ध संरक्षण

इस घोषणा–पत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें यह स्पष्ट किया गया कि ये अधिकार किसी देश, धर्म, जाति, लिंग या रंग के आधार पर सीमित नहीं हैं, बल्कि प्रत्येक मनुष्य को समान रूप से प्राप्त हैं।

(घ) अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियाँ और संस्थाएँ

1948 की घोषणा के बाद मानवाधिकारों को कानूनी रूप देने के लिए अनेक अंतर्राष्ट्रीय संधियाँ और संस्थाएँ स्थापित की गईं। इनमें प्रमुख हैं–

- नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (ICCPR)
- आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (ICESCR)
- महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव उन्मूलन संधि
- बाल अधिकार संधि

इन संधियों ने मानवाधिकारों को केवल नैतिक घोषणा नहीं रहने दिया, बल्कि उन्हें अंतर्राष्ट्रीय कानून का स्वरूप प्रदान किया। विभिन्न देशों को यह बाध्य किया गया कि वे अपने–अपने संविधान और कानूनों में मानवाधिकारों की रक्षा के लिए ठोस प्रावधान करें।

(ङ) मानवाधिकार आंदोलन का वैश्विक विस्तार

20वीं सदी में मानवाधिकार आंदोलन केवल सरकारी प्रयासों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इसमें गैर–सरकारी संगठन, सामाजिक

कार्यकर्ता, बुद्धिजीवी और आम नागरिक भी सक्रिय रूप से जुड़े। नस्लभेद के विरुद्ध संघर्ष, महिलाओं के अधिकार, श्रमिक आंदोलन, बाल अधिकार और पर्यावरण संरक्षण जैसे विभिन्न आंदोलनों ने मानवाधिकारों को एक व्यापक सामाजिक आधार प्रदान किया। इस प्रकार 20वीं सदी में मानवाधिकारों ने दार्शनिक और नैतिक अवधारणा से आगे बढ़कर एक सशक्त अंतर्राष्ट्रीय आंदोलन और कानूनी संरचना का रूप ग्रहण किया, जिसने आधुनिक विश्व व्यवस्था को मानवीय मूल्यों के साथ जोड़ने का कार्य किया।

7. भारत में मानवाधिकारों का विकास

भारत में मानवाधिकारों की अवधारणा कोई आधुनिक आयातित विचार नहीं है, बल्कि इसकी जड़ें प्राचीन भारतीय दर्शन, धर्म, नैतिकता और सामाजिक परंपराओं में गहराई तक विद्यमान रही हैं। प्राचीन काल से ही भारत में सर्वे भवन्तु सुखिनः, अहिंसा, करुणा, न्याय और समता जैसे सिद्धांत मानव जीवन के मूल मूल्य रहे हैं। हालांकि समय–समय पर सामाजिक असमानताएँ, जातीय भेदभाव और शोषण भी विद्यमान रहे, फिर भी मानव गरिमा और नैतिक कर्त्तव्य की चेतना भारतीय समाज की आत्मा में निरंतर बनी रही। आधुनिक युग में भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और संविधान निर्माण की प्रक्रिया ने मानवाधिकारों को स्पष्ट संवैधानिक स्वरूप प्रदान किया।

(क) स्वतंत्रता आंदोलन और मानवाधिकार

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की लड़ाई नहीं था, बल्कि यह मानव गरिमा, मौलिक अधिकारों और सामाजिक न्याय के लिए एक व्यापक संघर्ष था। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान भारतीय जनता को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता, न्याय और राजनीतिक भागीदारी जैसे मूल अधिकारों से वंचित रखा गया था। इसी अन्याय के विरुद्ध भारतीय जनमानस में राष्ट्रीय चेतना विकसित हुई। महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन को सत्य, अहिंसा और मानवाधिकारों से जोड़ दिया। उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा, श्रमिकों के अधिकार, दलितों के उत्थान, महिलाओं की समानता और धार्मिक सहिष्णुता पर विशेष बल दिया। उनका मानना था कि स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ तभी है जब समाज का अंतिम व्यक्ति भी सम्मान और सुरक्षा के साथ जीवन जी सके। इसी प्रकार डॉ. भीमराव अंबेडकर ने सामाजिक समानता, अस्पृश्यता उन्मूलन और कानून के समक्ष समानता को मानवाधिकारों का मूल आधार माना। इस प्रकार भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन ने मानवाधिकारों को केवल राजनीतिक नारों तक सीमित न रखकर सामाजिक और नैतिक आंदोलन का रूप प्रदान किया।

(ख) भारतीय संविधान और मौलिक अधिकार (1950): 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ भारतीय संविधान मानवाधिकारों की रक्षा का सबसे सशक्त कानूनी दस्तावेज है। संविधान निर्माताओं ने स्वतंत्रता संग्राम के अनुभवों और अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार सिद्धांतों से प्रेरणा लेकर नागरिकों को मौलिक अधिकारों (Fundamental Rights) के रूप में व्यापक सुरक्षा प्रदान की।

भारतीय संविधान के भाग–III में निम्नलिखित प्रमुख अधिकार शामिल किए गए हैं–

- समानता का अधिकार – सभी नागरिकों को कानून के समक्ष समानता
- स्वतंत्रता का अधिकार – विचार, अभिव्यक्ति, आवागमन और निवास की स्वतंत्रता
- शोषण के विरुद्ध अधिकार – बेगार, मानव तस्करी और बाल श्रम पर प्रतिबंध
- धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार – धार्मिक विश्वास और पूजा की स्वतंत्रता
- संवैधानिक उपचार का अधिकार – अपने अधिकारों की रक्षा के लिए न्यायालय जाने का अधिकार

ये मौलिक अधिकार न केवल नागरिकों को शक्ति प्रदान करते हैं, बल्कि राज्य की निरंकुशता पर भी प्रभावी नियंत्रण स्थापित करते हैं। भारतीय संविधान ने यह स्पष्ट कर दिया कि राज्य का सर्वोच्च कर्त्तव्य नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना है।

(ग) नीति निर्देशक तत्त्व और मौलिक कर्त्तव्य

भारतीय संविधान में मानवाधिकारों की रक्षा केवल मौलिक अधिकारों तक सीमित नहीं है, बल्कि नीति निर्देशक तत्त्व और मौलिक कर्त्तव्य भी इसी उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। नीति निर्देशक तत्त्व राज्य को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय की स्थापना हेतु मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, जैसे–

- शिक्षा का प्रसार
- श्रमिकों की सुरक्षा
- महिला और बाल कल्याण
- सामाजिक समानता की स्थापना

वहीं मौलिक कर्त्तव्य प्रत्येक नागरिक को यह याद दिलाते हैं कि अधिकारों के साथ–साथ समाज के प्रति उत्तरदायित्व निभाना भी अनिवार्य है।

(घ) मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 और मानवाधिकार आयोग: भारत में मानवाधिकारों की प्रभावी निगरानी और संरक्षण के लिए मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 पारित किया गया। इस अधिनियम के अंतर्गत–

- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC)
- राज्य मानवाधिकार आयोग
- बाल अधिकार आयोग

जैसी संस्थाओं की स्थापना की गई।

इन आयोगों का मुख्य उद्देश्य मानवाधिकार उल्लंघन की जांच करना, पीड़ितों को न्याय दिलाने की सिफारिश करना और सरकार को नीतिगत सुझाव देना है। इन संस्थाओं के माध्यम से भारत ने यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया है कि मानवाधिकार केवल संविधान की पुस्तकों में सीमित न रह जाएँ, बल्कि उनका वास्तविक संरक्षण भी हो।

(ङ) समकालीन भारत में मानवाधिकार

आज के भारत में मानवाधिकारों का दायरा और अधिक व्यापक हो गया है। शिक्षा का अधिकार, सूचना का अधिकार, महिला सशक्तिकरण, डिजिटल अधिकार, पर्यावरण संरक्षण और उपभोक्ता अधिकार जैसे नए आयाम मानवाधिकारों के आधुनिक स्वरूप को दर्शाते हैं। इसके साथ ही गरीबी, बेरोजगारी, लैंगिक हिंसा, सामाजिक भेदभाव और पुलिस अत्याचार जैसी समस्याएँ आज भी मानवाधिकारों के सामने गंभीर चुनौती बनी हुई हैं। इस प्रकार भारत में मानवाधिकारों का विकास एक सतत प्रक्रिया है, जो संविधान, न्यायपालिका, सामाजिक आंदोलनों और नागरिक जागरूकता के माध्यम से निरंतर आगे बढ़ रही है।

8. आधुनिक लोकतंत्र और मानवाधिकार

आधुनिक युग में मानवाधिकार और लोकतंत्र एक–दूसरे के पूरक बन चुके हैं। आज यह सर्वमान्य तथ्य है कि किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की वास्तविक गुणवत्ता इस बात से तय होती है कि वहाँ नागरिकों के अधिकारों की कितनी प्रभावी सुरक्षा की जाती है। लोकतंत्र केवल मतदान की प्रक्रिया तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह एक ऐसी शासन प्रणाली है जिसमें व्यक्ति की स्वतंत्रता, समानता, न्याय और गरिमा को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। मानवाधिकार ही लोकतंत्र को सजीव और सार्थक बनाए रखते हैं। आधुनिक लोकतंत्र में नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, विचार की स्वतंत्रता, संगठन बनाने का अधिकार और निष्पक्ष न्याय प्राप्त करने की गारंटी दी जाती है। स्वतंत्र न्यायपालिका, स्वतंत्र प्रेस, पारदर्शी प्रशासन और निष्पक्ष चुनाव व्यवस्था मानवाधिकारों की रक्षा के प्रमुख आधार स्तंभ माने जाते हैं। ये संस्थाएँ सत्ता पर नियंत्रण रखती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि राज्य शक्ति का दुरुपयोग न हो। आज के वैश्विक युग में मानवाधिकारों की अवधारणा केवल राष्ट्रीय सीमाओं तक सीमित नहीं रही है। अंतर्राष्ट्रीय संगठन, वैश्विक न्यायालय, मानवाधिकार आयोग, मीडिया और नागरिक समाज मिलकर दुनिया भर में मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए प्रयासरत हैं। नस्लीय भेदभाव, महिला हिंसा, शरणार्थी संकट, बाल श्रम, मानव तस्करी, आतंकवाद और युद्ध जैसे विषय आज मानवाधिकार विमर्श के प्रमुख केंद्र बन चुके हैं। डिजिटल युग में मानवाधिकारों को नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है–जैसे डिजिटल गोपनीयता, साइबर अपराध, ऑनलाइन निगरानी और व्यक्तिगत डेटा की सुरक्षा। यह स्पष्ट करता है कि मानवाधिकार कोई स्थिर अवधारणा नहीं है, बल्कि समय के साथ इसका स्वरूप भी निरंतर बदलता और विस्तृत होता जा रहा है। इस प्रकार आधुनिक लोकतंत्र में मानवाधिकार केवल संवैधानिक प्रावधान नहीं, बल्कि नागरिकों के सम्मानजनक जीवन की आधारशिला बन चुके हैं।

9. निष्कर्ष

मानवाधिकारों का ऐतिहासिक विकास यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि मानव सभ्यता ने एक लंबी, संघर्षपूर्ण और जागरूकता से भरी यात्रा तय की है। प्राचीन सभ्यताओं में जहाँ अधिकार कर्त्तव्यों और नैतिकता से जुड़े थे, वहीं मध्यकाल में सत्ता और सामंतवाद के कारण मानव स्वतंत्रता सीमित रही। पुनर्जागरण और मानवतावाद ने मनुष्य को केंद्र में रखकर सोचने की नई दिशा दी, जबकि आधुनिक क्रांतियों ने मानवाधिकारों को संवैधानिक और राजनीतिक मान्यता प्रदान की। 20वीं सदी के विश्व युद्धों ने मानवता को यह सिखाया कि यदि मानवाधिकारों की उपेक्षा की गई, तो उसका परिणाम पूरी सभ्यता के लिए विनाशकारी हो सकता है। इसी चेतना से अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार आंदोलन का जन्म हुआ और संयुक्त राष्ट्र संघ व सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणा–पत्र जैसे ऐतिहासिक प्रयास संभव हुए। भारत जैसे लोकतांत्रिक राष्ट्रों में संविधान के माध्यम से मानवाधिकारों को मजबूत आधार प्रदान किया गया। आज मानवाधिकार केवल कानून का विषय नहीं हैं, बल्कि वे मानव जीवन की गरिमा, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय के प्रतीक बन चुके हैं। फिर भी यह सत्य है कि आज भी गरीबी, असमानता, हिंसा, युद्ध, नस्लवाद और लैंगिक भेदभाव जैसी समस्याएँ मानवाधिकारों के समक्ष गंभीर चुनौतियाँ बनी हुई हैं। अतः यह आवश्यक है कि मानवाधिकारों की रक्षा केवल सरकारी जिम्मेदारी न रहे, बल्कि प्रत्येक नागरिक इसे अपना नैतिक कर्त्तव्य समझे। अंततः यह कहा जा सकता है कि मानवाधिकार मानव सभ्यता की आत्मा हैं और इनके संरक्षण के बिना न तो लोकतंत्र जीवित रह सकता है और न ही मानव समाज न्यायपूर्ण बन सकता है।

10. संदर्भ

1. Sharma R. Human Rights: Concept and Development. New Delhi: Radha Prakashan; c2015.
2. Verma SP. Indian Culture and Human Values. New Delhi: Prabhat Prakashan; c2012.
3. Singh R. Human Rights and International Law. New Delhi: Gargi Publications; c2014.
4. Mishra SN. Human Rights in India. New Delhi: Oxford University Press; c2011.
5. Basu DD. Introduction to the Constitution of India. 23rd ed. Gurugram: LexisNexis; c2018.
6. Tharoor S. India: From Midnight to the Millennium and Beyond. New Delhi: Penguin Books; c2007.
7. Sen A. The Idea of Justice. London: Penguin Books; c2009.
8. National Council of Educational Research and Training (NCERT). Political Theory: Class XI. New Delhi: NCERT; c2022.
9. United Nations. Human rights [Internet]. New York: United Nations; c2024. Available from: https://www.un.org/en/global-issues/human-rights
10. United Nations. Universal Declaration of Human Rights [Internet]. New York: United Nations; c2024. Available from: https://www.un.org/en/about-us/universal-declaration-of-human-rights
11. United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization (UNESCO). Human rights education [Internet]. Paris: UNESCO; c2024. Available from: https://www.unesco.org/en/human-rights-education
12. Stanford Encyclopedia of Philosophy. Human rights [Internet]. Stanford (CA): Stanford University; c2023. Available from: https://plato.stanford.edu/entries/rights-human/
13. Library of Congress. Magna Carta: Muse and Mentor [Internet]. Washington (DC): Library of Congress; c2023. Available from: https://www.loc.gov/exhibits/magna-carta-muse-and-mentor/
14. Amnesty International. What we do [Internet]. London: Amnesty International; c2024. Available from: https://www.amnesty.org/en/what-we-do/

Creative Commons (CC) License
This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.